वाल्मीकीय रामायण में नैतिक मूल्य:

डॉ० प्रियम्वदा, एम०ए०, एम०एड०, पी-एच०डी०

महर्षि वाल्मीकि संस्कृत साहित्य के आदि कवि तथा उनकी रचना, रामायण, को आदि महाकव्य के रूप में जाना जाता है । कामातुर क्रौञ्च पक्षी को बहेलिया ने मार दिया । विलपती क्रौञ्ची के करुण विलाप को देखकर उनका हृदय करुणा से युक्त हो गया तथा छन्दबद्ध होकर श्लोक के रूप में निकला –

" मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समा: ।
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधी: काममोहितम् ।। १५ ।।

वाल्मीकि रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने एक आदर्श समाज, राज्य तथा राष्ट्र के निर्माण के लिए उन नैतिक मूल्यों का निर्धारण किया हैं जिन्हें व्यक्ति अपने जीवन में उतारकर स्वस्थ आदर्शपूर्ण समाज एवं राष्ट्र का निर्माण कर सके ।

मातृदेवो भव, पितृदेवोभव, आचार्य देवो भव, अतिथि: देवो भव, के सिद्धान्त को श्रीराम ने अपने जीवन में उतारा है । सत्य, स्नेह, धर्म, न्याय, शांति, मानव जीवन के लिए परमावश्यक है । असत्य, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, अधर्म, अन्याय, अशान्ति, प्रभृति मानव जीवन के पतन और विनाश के कारक है ।

आदिकवि वाल्मीकि ने अपने महाकाव्य 'रामायण' के सात काण्डों में उपर्युक्त तथ्यों का प्रतिपादन कर यह सिद्ध किया है कि भारतीय संस्कृति, त्याग, तपस्या और तपोवन पर आधारित है । इन्ही नैतिक मूल्यों का अनुसरण करने से व्यक्ति, राष्ट्र तथा सम्पूर्ण मानवता का कल्याण और अभ्युदय हो सकता है । रामायण के निम्नलिखित सात काण्ड हैं –

- वालकाण्ड
- अयोध्याकाण्ड
- अरण्यकाण्ड
- किष्किन्धाकाण्ड
- सुन्दरकाण्ड
- युद्धकाण्ड
- उत्तरकाण्ड

श्री राम "गुरु शुश्रूषया विधा के सिद्धान्त को अपनाते है । राम और लक्ष्मण गुरु वशिष्ठ तथा विश्वामित्र जी की सेवा करते है । उनके आशीर्वाद से वे बला और अतिबला विद्धाओ को ग्रहण करते है । गुरु कि कृपा और आशीर्वाद से ही उन्हें अद्वितीय शस्त्रों तथा शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त हो सका ।
यथा :-

"गुरुकार्यणि सर्वाणि नियुज्य कुशिकात्मजे ।
ऊषुस्तां रजनी तत्र सरय्वां ससुखं त्रय: ।। २३ ।।
(बालकाण्ड, पृ0संख्या – ७९)

राम सत्य, स्नेह, दान, तप, त्याग, मित्रता, पवित्रता, दयालुता, सरलता, विद्या, आज्ञाकारिता, एम् गुरु शुश्रूषया इत्यादि समस्त नैतिक गुणों से सुसंपन्न थे ।
यथा :-

"सत्यं दानं तपस्त्यागो मित्रता शौचमार्जवम् ।
विद्या च गुरुशुश्रूषया ध्रुवाण्येतानि राघवे ।। ३० ।।
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २१०)

गुरु कि गरिमा के सम्बन्ध में महर्षि वाल्मीकि कहते है :-

"गुरुब्रह्मा, गुरुविष्णुगॅुरुदेवो महेश्वर: ।
गुरु: साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम: ।।
(श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण कि पाठ विधि, प्रथम भाग, पृ0संख्या – ०३ गीता प्रेस, गोरखपुर)

आचार्य चाणक्य भी गुरु कि महिमा पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं ।
यथा –

"गुरु शुश्रूषया विद्या पुस्तकेन धनेन वा ।
अथवा विदध्या विद्धा चतुर्थ नोपलभ्यते ।।
(चाणक्य सार संग्रह -१- ३६)

राम अपने पिता कि सेवा उनकी आज्ञा का पालन करना अपना महत्वपूर्ण धर्म (कर्तव्य) समझते हैं । इससे बढ़कर संसार में कोई धर्माचरण नहीं हैं ।
यथा:-

"न ह्यतो धर्मचरणं किञ्चिदस्ति महत्तरम् ।
यथा पितरि शुश्रूषया तस्य वा वचनक्रिया ।। २२ ।।
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २३५)

नैतिक मूल्यों के त्याग देने के कारण, लोभ और पुत्रमोहपाश में फँसकर, मंथरा कि दुबुद्धि से प्रभावित हो जाने पर विदुषी कैकई का सम्पूर्ण जीवन कलंकित, निंदनीय और त्याज्य बन गया । स्वयं कैकई पुत्र भरत उसे कहते है कि तू ने मुझे मार डाला । मैं पिता से सदा के लिए विछुड़ गया । पिता तुल्य बड़े भाई राम से विलग होकर में तो शोक में डूब रहा हूँ । राज्य लेकर क्या करना है ?
यथा:-

"किं नु कार्य हतस्येह मम राज्येन शोचत: ।
विहीनस्याथ पित्रा च भ्राता पितृसमेन ।। २ ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – ३७३)

भरत का स्नेह सागर से गहरा और उनका त्याग आकाश से भी ऊँचा है । उनके जीवन में नैतिक मूल्यों कि पराकाष्ठा है । भरत राम से कहते है कि राज्य के अधिकारी आप है, में तो आपका अनुज औरसेवकमात्र हूँ । तब राम भरत से कहते है कि हे भरत । अपने पिता महाराज दशरथ को असत्य के बंधन इ मुक्त करने के लिए जितना मेरा दायित्व है, उतना ही दायित्व तुम्हारा भी है । इसलिए तुम्ही अयोध्या का रजा बनकर अपने पिता को सत्यवादी बनाओ ।
अंत में भरत स्नेहवशात् श्रीराम कि चरणपादुका मांगते है । राम अपनी चरणपादुका उन्हें सौपते है । भरत श्री राम कि चरणपादुकाओ को राज्यसिंघासन पर अभीषिक्त कर के शासन का संचालन करते है ।
यथा:-

"एतद् राज्यं मम दत्तं संन्यासमुक्तमम् ।
योगक्षेमवहे चेमे पादुके हेमभूषिते ।। १४ ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – ४६३)

भरत का स्नेह और त्याग राम से तनीक भी कम नहीं है । माता के द्वारा छल से उपार्जित राज्यसुख को तिनके के समान तुच्छ मानकर बड़े भाई राम के समान ही वनवासी तथा सन्यासी का जीवन-यापन करते हुए वे अयोध्या के शासन-संचालन के लिए दिन-रात तत्पर रहते हैं । वे अपनी माता कैकई को माता न कहकर अयोध्या कि महारानी कहते हैं और उसके कक्ष में भी नहीं जाते हैं । इस तरह, भरत का समपूर्ण जीवन त्याग तपस्या, स्नेह और धर्म पर आधारित होने के कारन प्रसंशनीय तथा अनुकरणीय है ।
महाराज दशरथ कि दुर्दशा तथा कैकई के दुर्व्यवहार और हठधर्मिता के कारण ही राम को वन जाना पड़ रहा है, ऐसा देखकर लक्ष्मण का रोष जगता है और वे कथे हैं कि कैकई के कारण पिताजी हमारे शत्रु बन रहे हैं । हमें भी मोह,ममता छोड़कर इन्हें कैद कर लेना या मार डालना चाहिए ।
यथा:-

" प्रोत्सहितऽयं कैकय्या संतुष्टो यदि न: पिता ।
अमित्रभूतो नि: सङ्गं वध्यतामवध्यतामपि ।। १२ ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २४१, श्लोक १२)

यदि गुरु भी घमण्ड में आकर कर्तव्याकर्त्तव्य का ज्ञान खो बैठे और कुमार्ग पर चलने लगे तो उसे भी दण्ड देना आवश्यक हो जाता है ।
यथा:-

"गुरोर प्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानत: ।
उत्पंथ प्रतिपन्नस्य कार्य भवति शासनम् ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २४१, श्लोक १३)

राम लक्ष्मण को समझाते हुए कहते हैं कि पिताजी सदा सत्यवादी तथा सत्यपराक्रमी रहे हैं । वे सदा परलोक के भय से डरते रहे हैं । अतएवं मुझे वही काम करना चाहिए जिससे मेरे पिता जी का पारलौकिक भय दूर हो जाये । हे लक्ष्मण । सुख-दुःख, भय, क्रोध, लाभ-हानि उत्पति और विनाश, इस प्रकार के और भी जितने परिणाम प्राप्त होते हैं वे सभी दैव के ही 'कर्म' हैं । इसलिए मेरे राज्याभिषेक में जो विघ्न आया है, इसमें माता कैकई या पिताजी कारण नहीं हैं । क्योकि 'दैव' का प्रभाव अद्भुत होता है ।
यथा:-

"न लक्ष्मणास्मिन् मम राज्यविघ्ने माता यवीयस्यर्भी शङ्कितव्या ।
दैवाभिपन्ना न पिता कंथचिंज्जानासि दैवंहि तथा प्रभावम् ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २४७, श्लोक ३०)

माता कौसल्या राम को समझाती हुई कहती है कि शोकसन्तप्त माता को छोड़कर तुम्हे वन नहीं जाना चाहिए । तुम धर्म का पालन करना चाहते हो तो यहीं रहकर मेरी सेवा करो । क्योंकि माता कि सेवा करनेवाले कश्यपमुनि उत्तमतप से युक्त होकर स्वर्ग गए ।
यथा:-

"शुश्रुषुजर्ननीं पुत्र स्वगृहे नियतोवसन् ।
परेणतपसायुक्त: काश्यपस्त्रिदिवं गत: ।। २४ ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २४१)

राम अपनी माता से कहते है कि हे माँ । कण्डुमुनि ने पिता कि आज्ञा का पालन करने के लिए अधर्म समझते हुए भी गाय का वध किया था । हमारे कुल के राजा सागर के पुत्र, पिता कि आज्ञा का पालन हेतु पृत्वी खोदते हुए बुरी तरह मारे गए । जमदग्नि पुत्र परशुराम ने पिता कि आज्ञा का पालन करने के लिए माता 'रेणुका' का सिर काट डाला था । में भी अपने पिता के आदेश का अनुपालन करूँगा । क्योंकि मुझमे पिता कि आज्ञा का उल्लंघन करने कि शक्ति नहीं हैं । में वन को ही जाना चाहता हूँ ।
यथा:-

"नास्ति शक्ति: पितुर्वाक्यं समतिक्रमितुं मम ।
प्रसादये त्वां शिरसा गन्तुमिच्छाम्यहंवनम् ।। ३० ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २४२)

कौसल्या राम से कहती है कि तुम मुझे भी अपने साथ वन में ले चलो । राम उनसे कहते हैं कि पति कि सेवा ही नारी का धर्म है । पति का परित्याग नारी के लिए बड़ा ही क्रूरतापूर्ण कर्म है ।
यथा:-

"भर्तु: किल परित्यागे नृशसं केवलं स्त्रिया: ।
स भवत्या न कर्तव्यो मनसापि विगर्हित: ।। १२ ।।श
(अयोध्याकाण्ड, पृ0संख्या – २५१)

राम गुरु के आशीर्वाद और आदेश से तारकासुर का वध करते हैं । वे सीता स्वयम्वर में भी गुरु के आशीर्वाद और आदेश प्राप्त कर ही शिवधनुष को भंग करते हैं । क्रोधी परशुराम को भी अपने मधुर वचनों तथा व्यवहारों से पराजित करते हैं । गौतम मुनि कि शापित पत्नी अहल्या को पत्थर से सुन्दर स्त्री बना देते हैं । विराध, कबन्ध जैसे अनेक पात्रो का कल्याण करते हैं । निम्नजाति कि शबरी कि भक्ति तथा स्नेह के कारण उसके जूठे वेर खाकर समाज में उसका सम्मान बढ़ाते हैं । राम की मित्रता भी अनुपम है । किष्किन्धा के रजा सुग्रीव तथा लंकापति रावण के छोटे भाई विभीषण से उनकी मैत्री अनुकरणीय तथा प्रशंसनीय है ।
अहंकार विवेक को खा जाता है । वलवान, अहंकारी, दुराचारी, वाली अपने अनुज सुग्रीव को मार-पीट कर, उसकी पत्नी रुमा को अपनी पत्नी बना लेता है और उसे किष्किन्धा से भगा देता है । इसी प्रकार नीतिनिपुण, धर्माचारी विभीषण को सत्य और उचित सुझाव देने के कारण रावण उसे भरी सभा में अपमानित कर भगा देता है । विभीषण दु:खी होकर शरणागतवत्सल राम के समीप जाता है । राम उसे अपना मित्र बनाकर लंकापति के रूप में उसे बैठाने का निश्चय करते हैं । राम अहंकारी दुराचारी बाली को मारकर सुग्रीव को किष्किन्धा का राजा बनाते हैं और उसकी पत्नी रुमा को दिलाते हैं ।
इसी प्रकार ज्ञानी, पराक्रमी, तपस्वी होते हुए अहंकारी, दुराचारी रावण को राम मार कर विभीषण को लंका का रजा बना देते हैं ।
इनदोनों ने भी राम को हर समय सहायता और सहयोग कर युद्ध में रावण तथा उसके कुल का शर्वनाश करवाने में अपनी-अपनी भूमिका निभायीं ।
पक्षिराज जटायु सीता के अपहर्ता रावण से युद्ध किया और इसके विषय में राम को सूचित कर मृत्यु को प्राप्त हुए । वस्तुत: पक्षियों में भी ऐसे नैतिकगुणों के होने से ग्रंथकार यह बतलाना चाहते है कि मनुष्य को किसी स्त्री के हरणकर्ता को दण्ड देना चाहिए, रोकना चाहिए । राम ने पिता सदृश जटायु का दाहसंस्कार कर परमगति प्रदान कि ।
दुराचारिणी, कामुकी, स्वच्छन्दचारिणी शूर्पणखा अनैतिक, अधर्म का आचरण करती हुई राम और लक्ष्मण से प्रणय- याचना करती है । वह सीता को मारने के लिए तत्पर होती है । लक्ष्मण ऐसी स्थिति को देखकर उसकी नाक कट देते है । उसके मायावी चरित्र और दुर्व्यवहार के कारण उसके भाइयों तथा राक्षसकुल का विनाश हुआ ।
सीता का सतित्व, पति प्रेम तथा पतिव्रत धर्म अनूठा है । सीता पति की सेवा को ही अपना सर्वस्व मानती है । तभी वह राम के साथ जंगल के असह्य दु:खो को जानकर भी सहर्ष राम के साथ वन जाती है । राम के द्वारा अपहृत होकर लंका में उसे रावण तरह-तरह के प्रलोभन से अपनी ओर आकृष्ट कर अपनी महारानी बनाना चाहता है । किन्तु सीता उसके प्रलोभन में न पड़कर उसके धन-वैभव को तुच्छ समझती है । वह वनवासी अपने पति राम को सिंह और रावण को सियार के समान नीच बतलाती है ।
यथा:-

"शक्या लोभयितुं नाहमैश्वप्ररेर्ण धनेन वा ।
अनन्या राघवेणहं भास्करेण यथा प्रभा ।। १५ ।।श
(सुन्दरकाण्ड पृष्ठ संख्या – ७२)

वह रावण से कहती है कि यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो शरणागत वत्सल राम से मित्रता कर लो और मुझे उनके पास लौटा डो ।
यथा:-

"विदित: सर्वधर्मज्ञ: शरणागत वत्सल: ।
तेनमैत्री भवतु ते यदि जीवितुमिच्छसी ।। २० ।।श
तथा च
"प्रसादयस्व त्वं चैनं शरणागतवत्सल्यम् ।
माँ चास्मै प्रयतो भूत्वा निर्यातयितुमर्हसि ।। २१ ।।श
(सुन्दरकाण्ड पृष्ठ संख्या – ७२)

हनुमान जी नीति निपुण, वीर, पराक्रमी, विभिन्न शास्त्रों तथा शस्त्रों के ज्ञाता, परमकल्याणकारी, किष्किन्धा के राजा वानरराज सुग्रीव के चतुर मंत्री थे ।
भक्त शिरोमणि हनुमान श्री राम के अनन्य भक्त एवं बुद्धिमान सेवक भी थे । उनकी चतुराई, नीतिनिपुणता, पराक्रम, सेवकधर्म के प्रति सजगता आदि नैतिक मूल्यों से राम के सम्पूर्ण जीवन में काफी सहायता प्राप्त हुई है ।
रावण के दरबार में निर्भीक हनुमान जी लंकापति से कहते है कि आपने अनीति से श्री राम कि पत्नी का अपहरण कर महापाप किया है । आप उन्हें श्री राम को सौप दें । अन्यथा आपका और आपके सम्पूर्ण राक्षस कुल का विनाश हो जायेगा ।
यथा:-

"तत् त्रिकालहितं वाक्यं धेम्यमथार्नुयायि च ।
मन्यस्व नरदेवाय जानकीं प्रतिदीयताम् ।। २१ ।।श
(सुन्दरकाण्ड पृष्ठ संख्या – १५१)

राजा के रूप श्री राम का उज्जवल चरित्र आज के शासकों के लिए अनुकरणीय है । उन्होंने प्रजाहित के लिए स्वहितों का त्याग किया । अपनी गर्भवती पत्नी सीता को प्रजा के कहने के कारण जंगल भेजवा दिया । श्री राम प्रजा कि भलाई के लिए अहनिर्श तत्पर रहते हैं । उनकी न्यायिक-प्रक्रिया सरल और विलक्षण है । किसी भी कार्यार्थी को टाला नहीं जाता था । कार्यार्थी कुत्ता को भी उसकी बातों को सुनकर, उसके अपराधी ब्राह्मण कि बातों को भी सुनकर सद्धः दण्ड देकर यह सिद्ध करते है कि किसी कमजोर या असहाय को कोई बलवान यदि कष्ट देता है । तो उसे समुचित दण्ड दिया जायेगा ।

यथा:-

"इस प्रकार नैतिक मूल्यों के परिपालन और रक्षण करने के कारण ही उनके साम्राज्य में सर्वत्र शांति तथा सुव्यवस्था कायम थी । उन्ही विशिष्टताओं को देखकर रास्ट्रपिता महात्मागाँधी ने राज्य कि कल्पना कि थी ।

सन्दर्भ-सूची

- श्रीमद् वाल्मीकि-रामायण:- प्रथम तथा द्वितीय भाग, गीता प्रेस, गोरखपुर ।
- चाणक्य नीति दर्पण:- चाणक्य
- गीतगोविन्द:- जयदेव
- किरातार्जुनियम्:- भारवि
- प्रभोध चंद्रोदय:- कृष्ण मिश्र
- संस्कृत हिंदीकोश
- शब्दार्थ चिंतामणिकोश
- शुक्रनीति:- शुक्राचार्य
- रामायण कालीन समाज:- शांति कुमार नानुरामव्यास
- रामायण कालीन संस्कृति:- शांति कुमार नानुरामव्यास
- रामायण का आचार दर्शन:- अम्बा प्रसाद श्रीवास्तव
- शूद्रों का प्राचीन इतिहास:- रामशरण शर्मा
- भारतीय साहित्य में सीता का स्वरुप और विकास:- सत्यदेव
- महारानी कैकई – वन्दनीया अथवा निंदनीया:- महाराजा रामकिंकर जी
- दलित देवो भव :- आचार्य किशोर कुणाल
- उत्तर राम चरितम्:- भवभूति
- रामचरितमानस:- तुलसीदास